International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 14-08-2023, Accepted: 30-08-2023, Published: 15-09-2023
Volume 5, Issue 3, 2023, Page No. 12-14

भारतेन्दु युगीन कवियों में राष्ट्रीय–भाव बोध

ज्ञानी देवी गुप्ता
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, गुरु काशी विश्वविद्यालय, तलवंडी साबो बठिण्डा, पंजाब, भारत

सारांश
प्रस्तुत शोध का विषय भारतेन्दु–युगीन प्रमुख कवियों में राष्ट्रीय–भाव बोध है। भारतेन्दु–युग में जन–भाव बोध पुनर्जागरण की भावना से अनुप्रणित थी। अतः इसे पुनर्जागरण युग भी कहा गया। भारतेन्दु–युग आधुनिक–काल का प्रथम चरण है। इस युग में आधुनिकता के प्रवर्तक भारतेन्दु हरिचन्द्र को माना जाता है। क्योंकि इन्होंने रीतिकाल से चली आ रही शृंगारिक प्रवृति को समाज की तरफ मोड़ा व आम जनता को साहित्य का केन्द्र बनाया। इससे पहले सामान्य वर्ग की तरफ ध्यान न देकर राजा–महाराजाओं की प्रशंसा व सुन्दरियों के नख–शिख का वर्णन किया जाता था तथा आम जनता का साहित्य में कोई स्थान नहीं था। भारतेन्दु युगीन कवियों में राजभक्ति होते हुए भी उन्होंने देशभक्ति का प्रचार जनता में किया व अंग्रेजी शासन की कुप्रवृतियों व जनता के आलस्य को साहित्यिक ढंग से जनता के सामने लाने का प्रयास किया। इस युग में देशभक्ति व सामाजिक भाव बोध को तो कवियों ने बहुत अच्छे ढंग से जनता के सामने पेश किया लेकिन राजभक्ति के मोह को एकदम नहीं छोड़ पाये।

मूल शब्दः नख–शिख, शासन की कुप्रवृति, पुनर्जागरण, देशभक्ति, दुष्प्रभाव

अंग्रेजी का प्रचार व्यापार व प्रशासकीय आवश्यकताओं के लिए किया जा रहा था, पर अंग्रेजी साहित्य अध्ययन से उनके उद्देश्य चाहे सीमित रहे हों, इसका प्रभाव देश के शिक्षित समाज पर पड़ रहा था। देश में एक सशकत मध्यम वर्ग तैयार हो गया जो अपने देश की तुलना अन्य देशों से करने लगा। इससे राष्ट्र–भक्ति की भावना व विदेशी शासन की चाल जनता को समझ में आने लगी। इस युग में साहित्यकारों द्वारा सम्पादित पत्रिकाओं का प्रकाशन भी जन जागरण बढाने का कारण बना। देश में विदेशी शासन के दुष्प्रभाव के लिए उत्तरदायी परिस्थितियों को सामने लाकर इस युग के कवियों ने जन–मानस में राष्ट्रीय भावना के बीज–बोने का महत्वपूर्ण कार्य किया। कवियों में सामाजिक जीवन की उपेक्षा न कर जनता की समस्याओं पर व्यापक रूप में ध्यान दिया। भारतीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिए कवियों ने स्वदेशी उद्योगों को प्रोत्साहन देने व स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग करने पर बल दिया।

प्रताप नारायण मिश्र ने एक गजल में देश की दुर्दशा पर गहरी चिंता प्रकट की हैः

"अभी देखिए क्या दशा देश की हो, बदलता है रंग आसमां कैसे–कैसे।"[1]

राष्ट्र की चर्चा वास्तव में राजनीति का विषय है। किंतु राजनीतिक सामाजिक परिस्थितियों का सदैव प्रतिबिम्ब साहित्य में पड़ता है। वैसे तो साहित्य के लिए कोई विषय ही बाह्य नहीं होता। अतः शब्द की चर्चा साहित्य में भी प्राचीन काल से प्राप्त होती है। राष्ट्र प्रथमतः देश होता है। एक देश देश, की संज्ञा से ऊपर उठकर राष्ट्र की संज्ञा को तभी प्राप्त करता है जब उसके निवासियों में कुछ सामान्य विशेशताओं के आधार पर घनिश्ठ सम्बन्ध स्थापित हो जाता है तथा वे सब अपने देश की इकाई के रूप में देखते हैं। राष्ट्रशब्द को विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त किया जाता है।[2] इस शब्द के विविध अर्थ हैं–देश, राज्य, मंडल, प्रांत, धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक आत्मीयता से पूर्ण जन समुदाय, अनेक लोग, राज कारोबार आदि। भारतवर्श की प्राचीन साहित्य में भीराष्ट्रशब्द का अर्थ समाज, किया है। अर्थववेद में "त्वा, राष्ट्र भृत्याय"[3] मेंराष्ट्र शब्द समाज के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। प्राचीन संस्कृत काव्य में राष्ट्र, एक शब्द का उल्लेख निम्नलिखित वाक्यों में प्राप्त होता है– "पृथिव्यै समुद्रपर्यन्तया एक राष्ट्र" और "पशुधान्य" हिरण्य सम्पदा राजते शोभते इति राष्ट्र।" अर्थात पशु, धनधान्य आदि सम्पदाओं से सुशोभित भूमि भाग ही राष्ट्र है। शतपथ ब्राह्मणस मेंराष्ट्र शब्द की व्याख्या इस रूप में मिलती है–'"श्री वैराष्ट्र म" अर्थात समृद्धियुक्त ओजस्वी जनसमूह हीराष्ट्र है। संक्षेप में ऋग्वेद, तैत्तरीय संहिता, अर्थवेद में राष्ट्रशब्द का विपुल मात्रा में किंतु विभिन्न अर्थो में प्रयोग हुआ है।

इस युग में भक्तिकाल से चली आ रही ब्रज भाषा के स्थान पर खड़ी बोली प्रयुक्त होने लगी। इस युग के कवि एकदम से ब्रज भाषा से नहीं उभर पाये लेकिन खड़ी बोली को गद्य व पद्य की भाषा इसी युग की देन है, जो द्विवेदी युग में परिमार्जित व परिष्कृत भाषा के रूप में सामने आयी। इसी युग में कुछ कवियों ने खड़ी बोली का पुरजोर विरोध किया व ब्रज भाषा में काव्य रचनाएं की। इस युग के कवि साहित्यकार होने के साथ–साथ पत्रकार भी थे। अतः सामाजिक भाव बोध व राष्ट्रभक्ति परक कविता इनकी पत्रिकाओं के माध्यम से जनता तक पहुँची। राष्ट्रीय भावना का उदय इस काल की एक प्रमुख विशेशता है। ब्रह्मसमाज, प्रार्थना समाज, आर्यसमाज व विवेकानन्द के विचारों का प्रभाव भी आम जन–जीवन पर पड़ रहा था। पुनर्जागरण की प्रक्रिया भी इस युग में हुई। पाशचात्य शिक्षा प्रणाली में स्वतन्त्रता की प्रेरणा के बीज विद्यमान थे। भारतेन्दु–युग में कवियों ने शृंगारिक भावना को छोड़कर जन–सामान्य को साहित्य का विषय बनाया। इस युग में कवियों द्वारा प्रतिद्वन्द्वी भावनाओं या दो विपरीत धाराओं का एक साथ चित्रण किया– एक देशभक्ति दूसरी राजभक्ति। प्रथम पक्ष में हिंदी–हिन्दु–हिन्दुस्तानी का गुणगान तो दुसरी तरफ जजिया जैसे कर न लगाने पर विदेशी शासन की मुक्त कंठ से प्रशंसा।

द्विवेदी युग की राष्ट्रीय भावनाओं से परिपूर्ण कविताओं की रचना इसी युग की देन है। भले ही वो परिमार्जित व परिष्कृत दिवेदी युग में हुई हों। भारतेन्दु–युगीन कवियों ने एक नये युग का सूत्रपात किया। अकर्मण्य शासक व आलस्यमयी जनता की तंद्रा को तोड़कर जन–जागरण का काम किया। मैं इसमें यह निष्कर्ष देना चाहती हूँ कि देशभक्ति पूर्ण कविताएं हमें प्रमुख कविताओं में अभूत–पूर्व देखने को मिलती है। इन कवियों ने देश दशा सामाजिक परिवेश और राजनीतिक भाव बोध को साहित्य का विषय बनाया।

इस युग के कवि पुरानी भाषा या परम्परा को एकदम नहीं छोड़ पाये लेकिन साहित्यकारों को एक नयी दिशा दी व जनता को जागृत करने का सराहनीय प्रयास किया। भारतेन्दु युगीन साहित्यकार नये जीवन की शुरूआत का सदेंशा लेकर आये। साहित्य सर्जन की दृष्टि से प्रायः सभी विधाओं का सृजन इस युग में हुआ। आधुनिक हिन्दी साहित्य का यह प्रथम उत्थान था। इस उत्थान में सबसे मूल्यवान तत्व था– साहित्यकारों का अदम्य उत्साह। भारतेन्दु युगीन प्रमुख कवियों ने भारत के गौरवशाली इतिहास का सजीव चित्रण किया। रीतिकालीन कवि भूषण ने तत्परता व वीरता का परिचय दिया था लेकिन ये क्षेत्रिय भावना व संकीर्ण राष्ट्रीयता से ऊपर नहीं उठ सके। पर भारतेन्दु युगीन कवियों की राष्ट्रीय भावना क्षेत्र विशेश की न होकर पूरे देश में राष्ट्र भावना का उदय था। भारतेन्दु–काल का साहित्य व्यापक जागरण व संदेश लेकर आया और भाषा के स्वरूप में ही अभूतपूर्व प्रगति हुई।

कवि शब्द का आजकल सामान्यतः प्रयोग कविताओं के लेखकों के लिए किया जाता है किन्तु यदि हम इस शब्द के पारम्परिक प्रयोंगों को देखें तो कुछ अलग ही दृश्य दिखायी पडता हैं। प्राचीन कवियों ने कविताएं लिख कर ही अपनी भावनाओं को व्यक्त नहीं किया है बल्कि गद्य साहित्य भी बहुत लिखा है। भारतेन्दु युग में हिन्दी गद्य साहित्य की नींव रखी गयी है। भारतेन्दु युग में तो गद्य साहित्य की अच्छी भूमिका रही है। अतः हम यहां कवि का अर्थ व्यापक रूप में लेते हैं और उनकी गद्य रचनाओं का भी विवरणात्मक अध्ययन करेंगे।

अपने समय के महापुरूशों अथवा नेताओं की प्रशस्ति अथवा उनके प्रति श्रद्धांजलि भी व्यापक देश–प्रेम का ही एक अंग है। यह श्रद्धा–प्रेम भी देश–प्रेम के ही अंतर्गत है। पं, सत्यनारायण कविरत्न, पूर्ण, व गुप्त जी आदि कवियों ने अपने समय के प्रसिद्ध नेताओं का गुणगान किया है।[5] गुप्त जी ने तो संसार के सभी प्रसिद्ध धर्मों और महापुरूशों के प्रति अपनी विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित की है। विद्यार्थी, मजदूर तथा किसानों को उनकी जीवनी–शक्ति तथा कृतित्व के कारण, संबोधन करके भी कविताएँ लिखी गई है।[6]

इसी प्रकार स्त्रियों का आभूशण–प्रेम[7] स्त्रियों का अपमान, लीक या रूढ़ि–पालन, अविद्या आदि बुराइयों पर भी मार्मिक उद्‌गार यत्र–तत्र मिलते हैं। मन्दिरों का उद्धार तथा तिलक–चन्दन इत्यादि की निःसारता पर भी गुप्त जी ने अपने विचार प्रकट किये हैं।[8]

तत्कालीन भारतीय राष्ट्र के उत्थान के लिए समाज का संगठन एवं हिन्दु–मुस्लिम–ऐक्य–भावना का भी बड़ी आवश्यकता थी। प्रायः सभी कवियों का ध्यान इस ओर था।[9] राजनीतिक क्षेत्र में उस समय स्वदेशी आन्दोलन जोरों पर था। कवियों ने भी पूर्ण शक्ति से इसमें सहयोग दिया। पूर्ण, जी ने अपने स्वदेशी कुंडल, में इस का सबसे अधिक उत्साह से वर्णन किया। कुछ उदाहरण देखिए–

पानी पीना देश का, खाना देशी अन्न,
निर्मल देशी रूधिर से नस नस हो संपन्न।
नस–नस हो संपन्न तुम्हारी उसी रूधिर से,
हृदय यकृत सर्वांग नखों तक लेकर शिर से।
यदि न देश हित किया, कहेंगे सब अभिमानी,
शुद्ध नहीं तब रक्त नहीं तुझमें कुछ पानी।।
गाढ़ा, झीना जो मिलै उसकी ही पोशाक,
कीजै अंगीकार तो रहे देश की नाक।
रहै देश की नाक स्वदेशी कपड़े पहने,
हैं ऐसे ही लोग देश के सच्चे गहने।
खारा अपना जल पियो मधुर पराया त्याग,
सीठे को मीठा करै पूर्ण देश–अनुराग।
पूर्ण देश अनुराग, सकल सज्जनों निवाहो,
है जो ह्यों पर प्राप्त अधिक उससे मतचाहो।[10]

कविरत्न जी को तो स्वदेशी की इतनी धुन है कि लोगों को देशी खांड की जगह विदेशी सफेद चीनी खाते देखकर बड़ा अफसोस होता है क्योंकि इससे धर्म जाता है–

मीठी बनी, चसकदार, बड़ी रसीली, स्वादिश्ट, ना तनक हू करूई कसीली, सों खांड त्यागि, नित खांड बनी विदेशी, लीलैं, स्वधर्म हिं तिलांजलि दै विशेशी।

मीठी चीनी को कड़वी–कसैली कहलाने का जोश देश–प्रेम में ही तो हो सकता है !

पूर्ण जी ने भी अपने स्वदेशी कुंडल, में चीनी के त्याग की नेक सलाह दी है। पं– महावीर प्रसाद द्विवेदी भी स्वदेशी वस्त्र के अपनाने की अपील करते हैं। उनको इस बात के कारण बड़ा दुख है कि–

चमकते रंग हैं हम को भुलाते, अनोखे बेल बूटे भी लुभाते।
नही हम देखते हैं पायदारी, हमारी है बड़ी यह भूल भारी।
विदेशी धोबियों तक ने हमारी, समझ पर है कलप की ईंट मारी।
पहनते धोतियाँ, सबको दिखाते, न इनकी चाल भी हम चित्त लाते।[11]

अपने समय के महापुरूशों अथवा नेताओं की प्रशस्ति अथवा उनके प्रति श्रद्धांजलि भी व्यापक देश–प्रेम का ही एक अंग है। यह श्रद्धा–प्रेम भी देश–प्रेम के ही अंतर्गत है। पं– सत्यनारायण कविरत्न, 'पूर्ण, व गुप्त जी आदि कवियों ने अपने समय के प्रसिद्ध नेताओं का गुणगान किया है।[12] गुप्त जी ने तो संसार के सभी प्रसिद्ध धर्मों और महापुरूशों के प्रति अपनी विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित की है। विद्यार्थी, मजदूर तथा किसानों को उनकी जीवनी–शक्ति तथा कृतित्व के कारण, संबोधन करके भी कविताएँ लिखी गई है।[13]

भारतीय विशेशतः हिन्दु–समाज की कुरीतियाँ देश की उन्नति में बाधक हैं। बाल–विवाह, अनमेल विवाह, पर्दा–प्रथा, रूढ़ि और परम्परा का मोह, जाति–पाँति व ऊँच–नीच के विचार, दहेज तथा अविद्या देश की उन्नति के मार्ग में भयंकर रोड़े है। इन कुरीतियों और विकारों का समूलोच्छेदन ही कवियों को इश्ट है। अछूतोद्धार के लिये गुप्त जी कहते हैं–

रहो न हे हिन्दू, संकीर्ण, न ही स्वयं ही जर्जर जीर्ण।
बढ़ो, बढ़ाओ अपनी बाँह, करो अछूतजनों पर छाँह।।
है समाज के वही सपूत, रखते हैं जो सबको पूत।
क्यों अछूत जन हुए अछूत, उनको लगी हमारी छूत।।[14]

बेजोड़ विवाह तथा वर–कन्या–विक्रय आदि निंदनीय कुरीतियों पर भी उद्‌गार व्यक्त किये गये हैं। गुप्त जी लिखते हैं–

प्रतिवर्श विधवा वृन्द की संख्या निरन्तर बढ़ रही,
रोता कभी आकाश है, फटती कभी हिल कर मही।
हा देख सकता कौन ऐसे दग्धकारी दाह को
फिर भी नहीं हम छोड़ते हैं बाल्य वृद्ध विवाह को।
बिकता कहीं वर है यहाँ बिकती तथा कन्या कहीं,
क्या अर्थ के आगे हमें अब इश्ट आत्मा भी नहीं।
हा, अर्थ ! तेरे अर्थ हम करते अनेक अनर्थ हैं,
धिक्कार, फिर भी तो नहीं सम्पन्न और समर्थ हैं।[15]

इसी प्रकार स्त्रियों का आभूशण–प्रेम[16] स्त्रियों का अपमान, लीक या रूढ़ि–पालन, अविद्या आदि बुराइयों पर भी मार्मिक उद्‌गार यत्र–तत्र मिलते हैं। मन्दिरों का उद्धार तथा तिलक–चन्दन

इत्यादि की निःसारता पर भी गुप्त जी ने अपने विचार प्रकट किये हैं।

तत्कालीन भारतीयराष्ट्रके उत्थान के लिए समाज का संगठन एवं हिन्दु–मुस्लिम–ऐक्य–भावना का भी बड़ी आवश्यकता थी। प्रायः सभी कवियों का ध्यान इस ओर था। राजनीतिक क्षेत्र में उस समय स्वदेशी आन्दोलन जोरों पर था। कवियों ने भी पूर्ण शक्ति से इसमें सहयोग दिया। पूर्ण, जी ने अपने स्वदेशी कुंडल, में इस का सबसे अधिक उत्साह से वर्णन किया। कुछ उदाहरण देखिए–

पानी पीना देश का, खाना देशी अन्न,
निर्मल देशी रूधिर से नस नस हो संपन्न।
नस–नस हो संपन्न तुम्हारी उसी रूधिर से,
हृदय यकृत सर्वांग नखों तक लेकर शिरसे।
यदि न देश हित किया, कहेंगे सब अभिमानी,
शुद्ध नहीं तब रक्त नहीं तुझमें कुछ पानी।।
गाढ़ा, झीना जो मिलै उसकी ही पोशाक,
कीजै अंगीकार तो रहे देश की नाक।
रहै देश की नाक स्वदेशी कपड़े पहने,
हैं ऐसे ही लोग देश के सच्चे गहने।
खारा अपना जल पियो मधुर पराया त्याग,
सीठे को मीठा करै पूर्ण देश–अनुराग।
पूर्ण देश अनुराग, सकल सज्जनों निवाहो,
है जो ह्यों पर प्राप्त अधिक उससे मतचाहो।

निष्कर्ष

कहा जा सकता है कि कविरत्न, जी को तो स्वदेशी की इतनी धुन है कि लोगों को देशी खांड की जगह विदेशी सफेद चीनी खाते देखकर बड़ा अफसोस होता है क्योंकि इससे धर्म जाता है –मीठी बनी, चसकदार, बड़ी रसीली, स्वादिश्ट, ना तनक हू करूई कसीली, सों खांड त्यागि, नित खांड बनी विदेशी, लीलैं, स्वधर्म हिं तिलांजलि दै विशेश।

मीठी चीनी को कड़वी–कसैली कहलाने का जोश देश–प्रेम में ही तो हो सकता है !

पूर्ण जी ने भी अपने स्वदेशी कुंडल, में चीनी के त्याग की नेक सलाह दी है। पं– महावीर प्रसाद द्विवेदी भी स्वदेशी वस्त्र के अपनाने की अपील करते हैं। उनको इस बात के कारण बड़ा दुख है कि–

चमकते रंग हैं हम को भुलाते, अनोखे बेल बूटे भी लुभाते।
नही हम देखते हैं पायदारी, हमारी है बड़ी यह भूल भारी।
विदेशी धोबियों तक ने हमारी, समझ पर है कलप की ईंट मारी।
पहनते धोतियाँ, सबको दिखाते, न इनकी चाल भी हम चित्त लाते।[17]

कवियों का ध्यान देश की विधवाओं को भी नहीं भुला सका है। कवि का दृश्टिकोण कितना प्रगतिशील है, देखिए–

विधवाओं का पुनर्विवाह, नहीं उच्च आदर्श निवाह।
पर उससे अच्छा सौ बार, जो है, दुराचार, व्यभिचार।
पुश्ट करो तुम अपना पक्ष, किन्तु न भूलो अन्तिम लक्ष। [18]

इस प्रकार कविगण नारी–समाज के आमूल सुधार के प्रति सजग है क्यों कि यह कार्य देशोत्थान के लिए अनिवार्य है।

राष्ट्र में अपना एक पृथक् एवं महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसकी महत्ता भी लोग स्वीकार करते हैं। व्यक्ति, के समान ही राष्ट्र का एक व्यक्तित्व बन जाता है। व्यक्ति के लिए अपना जीवन राष्ट्र को समर्पित करना उसका पवित्र कर्तव्य है। राष्ट्र –धर्म हमारा सर्वश्रेश्ठ धर्म है।

संदर्भ सूची

1. दाते–महाराष्ट्र शब्द–कोश पृ–) आपटे–संस्कृत–इंग्लिश डिक्शनरी–पृ– 601
2. तैत्तरीय संहिता 11
3. साहित्याचार्य शास्त्री हरदास–वेदांतील राष्ट्र –दर्शन पृ– 34
4. शतपथ ब्राह्मण पृ– 16
5. हृदय–तरंग, पृ– 107 से 118 तक, (रामतीर्थ, गांधी, रवीन्द्र, तिलक, गोखले, सरोजनी नायडू तथा लाजपत राय आदि महापुरूशों के प्रति की प्रशस्तियाँ), 'पूर्ण संग्रह पृ– 611, तथा गुप्त जी की अनेक कृतियाँ।
6. एक भारतीय आत्मा, की भारतीय विद्यार्थी, नामक कविता, भारत–भारती पृ, 172 और भारतभारती पृ, 91 आदि।
7. हिन्दू, पृ– 346
8. हृदय तरंग, पृ– 179
9. सूमन (सं. 1970 पृ– 79
10. भारतभारती, पृ– 140
11. भारतभारती– पृ– 136
12. वही, पृ– 136
13. हिन्दू, पृ– 301
14. पूर्ण संग्रह, पृ– 219 व भारतभारती, पृ– 115
15. हिन्दू, पृ– 244
16. हिन्दू, पृ, 346
17. हृदय तरंग, पृ– 179
18. सूमन(सं. 1970 पृ– 79